पशुओं के विरुद्ध हिंसा

drishtiias.com/hindi/printpdf/voilence-against-animals

वर्तमान संदर्भ

चाहे कर्नाटक के 'कंबाला' त्योहार में भैंसों की दौड़ आयोजित कराने का उदाहरण हो या तमिलनाडु में 'जल्लीकट्टू' में बैलों का; पशुओं के साथ अक्सर क्रूरता की बात सामने आती है। इसी प्रकार पशु बलि जैसे प्रचलन भी पशुओं के साथ हत्या की हद तक दुर्व्यवहार करते हैं।

मानव-पशु संबंध

- सभ्यता के विकास के साथ-साथ मानव ने प्रकृति से सामंजस्य बिठाने में सफलता हासिल की और इसी क्रम में पशु जगत से उसके संपर्क के नियम भी स्पष्ट होते चले गए।
- जहाँ कुछ पशु-पक्षी मानव के खानपान, श्रम, सुरक्षा एवं संचार की आवश्यकता की पूर्ति हेतु पालतू बनाए गए, वहीं पशुओं से जुड़े अनेक उत्पाद जैसे कि खाल, दाँत एवं हड्डियों से जुड़ी प्रतिष्ठा ने उनके शिकार को बढ़ावा दिया।
- जहाँ प्राचीन और मध्ययुगीन विश्व में युद्ध से लेकर धार्मिक कर्मकांडों तक में पशुओं का एक अहम स्थान रहा, वहीं आधुनिक विश्व में भी सुरक्षा व्यवस्था से लेकर वैज्ञानिक खोजों, विशेष तौर पर चिकित्सा एवं सौंदर्य प्रसाधनों के परीक्षण हेतु जानवरों का उपयोग किया जाता है।
- एक ओर मानव और पशु के बीच के संबंधों ने मानव सभ्यता के विकास में अहम भूमिका निभाई है, तो दूसरी ओर, इन संबंधों के चलते मानव द्वारा पशुओं के शोषण ने मानवता के समक्ष कुछ नैतिक प्रश्न खड़े किये हैं।

विभिन्न मत

- लगभग प्रत्येक धर्म एवं प्रमुख दर्शनों में पशुओं के प्रति मानव आचरण के विषय में नैतिक विचार मिलते हैं।
- 'ओल्ड टेस्टामेन्ट' (Old Testament) में आदि पुरुष आदम को धरती पर प्रत्येक जीव के ऊपर 'अधिकार' दिया गया जिसकी व्याख्या 'संरक्षक', न कि 'भक्षक' के अधिकार के रूप में की गई है। इसके अलावा इन आदेशों (Ten commandments) में भी मनुष्य और पशु को समान समझने की हिदायत दी गई है।
- इस्लाम में पशुओं के प्रति सद्व्यवहार की प्रेरणा है। पैगम्बर मोहम्मद ने एक स्वप्न देखा था कि एक महिला को मृत्यु के बाद दण्ड का भागी होना पड़ा क्योंकि उसने अपनी पालतू बिल्ली के प्रति निर्दयता दिखाई।
- हिन्दू धर्म में भी पशुओं के प्रति दया भाव दिखाने की सीख दी गई है। सिख धर्म में पशु हत्या को मानव मन को कलुषित करने वाला कृत्य कहा गया है। अहिंसा आधारित बौद्ध एवं जैन धर्म में भी पशुओं के प्रति हिंसा त्यागने एवं 'मारने वाले से सदा बचाने वाला बड़ा होता है' जैसे विचार प्रतिपादित किये गए हैं।

- प्राचीन यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने मानव को जैविक पदानुक्रम में शीर्ष पर माना है जिसके कारण मानव द्वारा पशुओं का उपयोग एवं उपभोग नैतिक रूप से उचित माना गया है, वहीं दूसरी ओर, पाइथागोरस और अरस्तू के ही प्रसिद्ध शिष्य थियोफ्रेस्टस ने मनुष्य द्वारा पशुओं के सम्मान की वकालत की है।
- फ्राँसीसी दार्शनिक देकार्त ने वैश्विक जीवन की यंत्रवादी व्याख्या देते हुए कहा कि मानव के अतिरिक्त संपूर्ण विश्व आत्मा, संवेदना एवं बौद्धिक क्षमता से हीन है। इस कारण पशुओं के विरुद्ध हिंसा का कोई नैतिक या अनैतिक पक्ष नहीं है क्योंकि देकार्त के अनुसार, पशु महज़ जटिल स्वचल रूप (complex automota) है जिसमें कोई संवेदना या तर्कशक्ति नहीं होती है।
- 17वीं शताब्दी में ब्रिटिश दार्शनिक जॉन लॉक एवं 18वीं शताब्दी के जर्मन दार्शनिक कांट के मतानुसार पशुओं के प्रति हिंसा स्वयं में तो अनैतिक नहीं है परंतु इसकी मानव को निर्दयी एवं क्रूर बनाने में भूमिका होने के कारण इससे बचना चाहिये।
- 18वीं शताब्दी के फ्रेंच दार्शनिक रूसो के अनुसार भी पशुओं के विरुद्ध हिंसा एवं विशेषतौर पर माँसाहार से इस कारण बचना चाहिये क्योंकि इससे समाज की हिंसक एवं पशुवत प्रवृत्तियाँ पुष्ट होती हैं।
- जेरेमी बेन्थम एवं इसके उपरांत शोपेनहावर ने इस विचारधारा को यह कहते हुए खंडित किया कि अगर नैतिकता एवं दया के लिये तर्कशक्ति ही अकेली कसौटी है जिसके अनुसार पशु इनके अधिकारी नहीं, तो फिर इसी तरह बच्चे एवं वयोवृद्ध भी (जिनकी तर्कशीलता बहुत उत्तम नहीं कही जा सकती), दया एवं नैतिक आचरण के नहीं अपितु पशु के समान ही क्रूर एवं हिंसक व्यवहार के भागी होंगे। शोपेनहावर ने इसमें जोड़ा कि पशु के प्रति नैतिक आचरण का प्रयोजन अहिंसक मानवीय समाज ही नहीं, अपितु पशु जगत का अपना अधिकार है।
- डार्विन का मानना था कि कुछ अपवादों को छोड़कर जैसे कि शरीर विज्ञान की खोज इत्यादि पशुओं के प्रति हिंसा को कभी भी तर्कसंगत नहीं ठहराया जा सकता। जर्मन दार्शनिक नीत्शे के अनुसार तो मानव असल में एक पशु ही है जिसकी तस्दीक वह दूसरे पशुओं के विरुद्ध हिंसा से आनन्दित होकर करता है।

पशु हिंसा के विविध स्वरूप

- धार्मिक स्थलों एवं प्रतिष्ठानों की ही बात करें तो कर्मकाण्डों से लेकर धार्मिक अनुष्ठानों तक में पशुओं के प्रति हिंसा की जाती है। चाहे केरल के मंदिरों में आनुष्ठानिक कार्यों के लिये बंदी हाथी हो, कामाख्या के प्रसिद्ध शक्तिपीठ में दी जाने वाली बलि या बकरीद जैसे मौकों पर होने वाली कुरबानी,सभी में पशुओं के विरुद्ध हिंसा अपने चरम पर होती है।
- मनोरंजन के लिये भी जब पशु को चिडि़याघर, सर्कस या घर में ही पिंजरे में रखा जाता है तो यह पशु के विरुद्ध बहुप्रचलित हिंसा की श्रेणी में आता है।
- दवा उद्योग अथवा सौन्दर्य प्रसाधन उद्योग द्वारा संचालित प्रयोगशालाएँ भी पशुओं के प्रति हिंसा करती हैं। न सिर्फ पशुओं को कई रसायनों की सुरक्षा जाँच के लिये प्रयोग में लाया जाता है बल्कि खतरनाक ड्रग्स या रसायन इत्यादि के प्रभाव से असंख्य जानवरों की मृत्यु भी होती है।
- आधुनिक विश्व में बढ़ते शहरीकरण एवं बिजली परियोजनाओं, सड़क और रेलवे के विस्तार द्वारा भी पशुओं के प्राकृतिक निवास की जो हानि हुई है, वह भी पशुओं के विरुद्ध हिंसा की ही श्रेणी में आती है।
- इन सबके अतिरिक्त मानव-समाज के अनेक वर्गों में पशुओं से जुड़े कुछ उत्पादों की मांग भी पशुओं के प्रति अमानवीय हिंसा से लेकर उनके शिकार तक को प्रोत्साहित करती है।

पशु हिंसा को लेकर तर्क

- धार्मिक कर्मकाण्डों से जुड़ी हिंसा के संदर्भ में तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि यह एक सांस्कृतिक विरासत का हिस्सा तथा धार्मिक विश्वासों एवं आस्थाओं से जुड़ा मुद्दा है।
- इसके अलावा मनोरंजन के लिये भी पशुओं के प्रति हिंसा का एक तर्क सांस्कृतिक विरासत तथा दूसरा इससे जुड़े लोगों का रोज़गार होता है। उदाहरण के तौर पर स्पेन में सांडों की लड़ाई (Bull-fighting) या तमिलनाडु में जल्लीकट्टू जैसे

कृत्य पारम्परिक मनोरंजन एवं खेल का स्थान रखते हैं।

- सर्कस न सिर्फ मनोरंजन का एक मुख्य साधन रहा है बल्कि कई पेशेवर करतबबाजों, कलाकारों आदि के रोज़गार का साधन भी रहा है।
- शहरीकरण एवं आधारभूत संरचना के विस्तार के दबाव में खानपान की आदतें एवं प्रतिष्ठा के लिये पशु-उत्पादों का प्रयोग भी पशुओं के विरुद्ध हिंसा को बढ़ावा देता है। इन दोनों के लिये भी पारम्परिक प्रचलन और व्यक्ति की निजी स्वतंत्रता का हवाला दिया जाता रहा है।
- पशुओं के विरुद्ध हिंसा के सबसे वीभत्स रूपों में से एक पशुओं पर दवा और सौन्दर्य प्रसाधन कंपनियों द्वारा अपनी प्रयोगशालाओं में किये जाने वाले प्रयोग हैं। इस विषय में तर्क यह दिया जाता है कि इन प्रयोगों से मानव जीवन का स्तर सुधारने में बहुत सहायता मिलती है तथा शरीर विज्ञान के क्षेत्र में कई खोजों के लिये पशुओं पर हुए अनुसंधान ने बड़ी भूमिका निभाई है।

निष्कर्ष

- आवश्यकता इस बात की है कि 'मानव' होने का दंभ भरने वाली प्रजाति, अपने मानव होने की नैतिक शर्तों के प्रति ईमानदार हो। इस ईमानदारी में इस बात की स्वीकृति तो होगी ही कि मानव और पशु, प्रकृति के अविभाज्य जीवन का हिस्सा हैं, और अन्ततः पूरी श्रृंखला में एक-दूसरे के लिये कदाचित् आवश्यक भी है।
- इस सत्य के प्रति कृतज्ञता का ज्ञापित की जानी चाहिये कि मानव सभ्यता के विकास में पशुओं का अहम योगदान रहा है और इस कारण से भी उनके विरुद्ध हिंसा पर अन्तर्निहित अनैतिकता के आलोक में यथासंभव रोक लगाई जानी चाहिये।